

Indian Journal of Modern Research and Reviews

This Journal is a member of the 'Committee on Publication Ethics'

Online ISSN:2584-184X



Research Article

परंपरा और अस्तित्व का संगम: झारखंड में लैंगिकता, स्वदेशी ज्ञान और जलवायु अनुकूलन

आरती कुमारी

शोधार्थी, इतिहास विभाग, राँची, विश्वविद्यालय राँची, झारखंड, भारत

Corresponding Author: * आरती कुमारी

DOI: <https://doi.org/10.5281/zenodo.23476902>

सारांश

यह लेख भारत के झारखंड राज्य के जलवायु-संवेदनशील ग्रामीण एवं वन-आश्रित क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन का विश्लेषण नारीवादी पारिस्थितिकी के दृष्टिकोण से करता है, जिसमें स्वदेशी लोकज्ञान को केंद्रीय स्थान दिया गया है। नारीवादी पारिस्थितिकी यह समझने का आलोचनात्मक ढाँचा प्रदान करती है कि पर्यावरणीय ज्ञान, श्रम और संसाधनों तक पहुँच किस प्रकार लैंगिक सामाजिक संबंधों के माध्यम से संरचित होती है। झारखंड के स्वदेशी समुदाय अनियमित वर्षा, दीर्घकालिक सूखे, वन क्षरण और घटती कृषि उत्पादकता जैसी समस्याओं का सामना कर रहे हैं और इन परिस्थितियों में उन्होंने जलवायु जोखिमों को कम करने के लिए स्थानीय रूप से विकसित ज्ञान प्रणालियों पर निर्भरता बनाए रखी है।

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वदेशी लोकज्ञान में प्रभावी और संदर्भ-विशिष्ट जलवायु अनुकूलन रणनीतियाँ निहित हैं। पारंपरिक जल-संग्रह प्रणालियों ने शुष्क ऋतुओं के दौरान संवेदनशीलता को कम किया और पूरे वर्ष जल उपलब्धता में सुधार किया। मिश्रित फसल प्रणालियों और स्थानीय रूप से अनुकूलित बीजों के उपयोग से बदलती जलवायु परिस्थितियों में फसल क्षति की दर घटी और कृषि विविधता बनी रही। मानकीकृत कृषि कैलेंडरों की तुलना में मौसमी पारिस्थितिक संकेतकों जैसे मिट्टी की नमी, पुष्पन चक्र और वन संकेत ने कृषि निर्णयों को स्थानीय जलवायु परिवर्तनशीलता के अधिक अनुकूल बनाया। इन प्रथाओं को अपनाने वाले परिवारों में जलवायु तनाव की अवधि में अधिक खाद्य सुरक्षा और आजीविका स्थिरता देखी गई।

नारीवादी पारिस्थितिकी के दृष्टिकोण से यह अध्ययन दर्शाता है कि जलवायु ज्ञान के निर्माण और संरक्षण में महिलाओं की भूमिका केंद्रीय है। बीज-संरक्षण, खाद्य संरक्षण, ईंधन और जल प्रबंधन तथा औषधीय पौधों का उपयोग मुख्यतः महिलाओं द्वारा किया जाता है, जो घरेलू पोषण, स्वास्थ्य और सहनशीलता को बनाए रखने में निर्णायक सिद्ध होता है। इसके बावजूद, झारखंड की जलवायु और पर्यावरणीय शासन संरचनाएँ महिलाओं के इस ज्ञान को प्रायः निर्णय-प्रक्रियाओं से बाहर रखती हैं। लेख तर्क देता है कि महिलाओं के पारिस्थितिक ज्ञान को जलवायु नीति और स्थानीय शासन में सम्मिलित किए बिना टिकाऊ और न्यायपूर्ण जलवायु अनुकूलन संभव नहीं है।

Manuscript Information

- ISSN No: 2584-184X
- Received: 07-08-2026
- Accepted: 12-10-2026
- Published: 19-10-2026
- MRR:4(10); 2026: 171-175
- ©2026, All Rights Reserved
- Plagiarism Checked: Yes
- Peer Review Process: Yes

How to Cite this Article

कुमारी आ. परंपरा और अस्तित्व का संगम: झारखंड में लैंगिकता, स्वदेशी ज्ञान और जलवायु अनुकूलन. Indian J Mod Res Rev. 2026;4(10):171-175.

Access this Article Online



www.mrrjournal.in

मुख्य शब्द: नारीवादी पारिस्थितिकी; स्वदेशी लोकज्ञान; जलवायु अनुकूलन; लैंगिकता; झारखंड

1. प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन मौजूदा पारिस्थितिक और सामाजिक, आर्थिक असमानताओं को और अधिक गहरा करता है, विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ आजीविका भूमि, जल और वनों से घनिष्ठ रूप से जुड़ी होती है। वैश्विक दक्षिण के कृषि एवं वन-आश्रित समुदाय पर्यावरणीय परिवर्तनशीलता से सीधे प्रभावित होते हैं, क्योंकि उनका अस्तित्व जैव-विविधता और मौसमी चक्रों पर निर्भर करता है। इन प्रभावों का एक स्पष्ट लैंगिक आयाम है। कृषि कार्य, जल-संग्रह, देखभाल तथा वन-आधारित आजीविका से जुड़ी सामाजिक रूप से संगठित भूमिकाओं के कारण महिलाएँ विशेषकर स्वदेशी और वंचित समुदायों से आने वाली महिलाएँ जलवायु तनाव का अधिक गंभीर रूप से सामना करती हैं।

झारखंड लैंगिक जलवायु अनुकूलन के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र प्रस्तुत करता है। पूर्वी भारत का यह खनिज-समृद्ध किन्तु पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील राज्य दशकों से निष्कर्षण-आधारित विकास प्रक्रियाओं जैसे बॉक्साइट, लौह अयस्क और कोयला खनन से प्रभावित रहा है। इन प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप जल-प्रणालियों में परिवर्तन, वन आच्छादन में कमी और मिट्टी की उर्वरता में गिरावट आई है, जिससे स्वदेशी (आदिवासी) समुदायों की संवेदनशीलता बढ़ी है। अनियमित मानसून, लम्बे सूखे काल, स्थानीय बाढ़ और वन क्षरण ने आजीविका संबंधी जोखिमों को और तीव्र कर दिया है।

माध्यम से समृद्ध पारिस्थितिक ज्ञान प्रणालियाँ विकसित की हैं। इस ज्ञान के संवर्धन, संरक्षण और प्रसार में महिलाओं की केंद्रीय भूमिका है। तथापि, वर्तमान जलवायु नीति प्रतिमान प्रायः तकनीकी समाधानों जैसे मानकीकृत कृषि कैलेंडर, संकर बीज या सिंचाई अवसंरचना को प्राथमिकता देते हुए स्थान-विशिष्ट, अनुभवजन्य ज्ञान की उपेक्षा करते हैं।

यह अध्ययन तर्क प्रस्तुत करता है कि झारखंड की स्वदेशी महिलाएँ जलवायु परिवर्तन की निष्क्रिय पीड़ित नहीं, बल्कि सक्रिय अनुकूलनकर्ता हैं। नारीवादी पारिस्थितिकी और मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह लेख दर्शाता है कि लैंगिक पारिस्थितिक प्रथाएँ जलवायु सहनशीलता के गतिशील रूप हैं और साथ ही यह शासन संरचनाओं में इस ज्ञान के बहिष्करण की आलोचनात्मक समीक्षा करता है।

लैंगिक पारिस्थितिकीयाँ और स्थितिजन्य ज्ञान, मानवशास्त्रीय अध्ययन इस बात पर बल देते हैं कि पारिस्थितिक ज्ञान सामाजिक रूप से निर्मित, ऐतिहासिक रूप से स्थित और दैनिक जीवन में अंतर्निहित होता है। अनुकूलन केवल एक तकनीकी समाधान नहीं है, बल्कि यह एक जीवित सामाजिक प्रक्रिया है जो अनुष्ठानों, सांस्कृतिक स्मृतियों और पीढ़ीगत हस्तांतरण से प्रभावित होती है। नारीवादी पारिस्थितिकी इस दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते हुए उन शक्ति-संबंधों की पड़ताल करती है जो संसाधनों और ज्ञान तक पहुँच को नियंत्रित करते हैं। प्रारंभिक इको-फेमिनिस्ट चिंतकों ने महिलाओं और प्रकृति के शोषण के बीच समानताओं को रेखांकित करते हुए पितृसत्तात्मक नियंत्रण संरचनाओं को उजागर किया। इसके विपरीत, समकालीन नारीवादी राजनीतिक पारिस्थितिकी प्रतीकात्मक संबंधों से आगे बढ़कर संपत्ति अधिकारों, शासन संरचनाओं और ज्ञान-सत्ता (एपिस्टेमिक अथॉरिटी) में विद्यमान भौतिक असमानताओं का विश्लेषण करती है।

झारखंड के संदर्भ में लिंग, वर्ग, ऐतिहासिक विस्थापन और स्वदेशीयता परस्पर अंतःक्रिया करते हैं। परिणामस्वरूप, जलवायु संवेदनशीलता सामाजिक रूप से विभेदित होती है। डोना हरावे महिलाओं की पारिस्थितिक गतिविधियों को "स्थितिजन्य ज्ञान" के रूप में वर्णित करती हैं, क्योंकि वे शरीरगत, आंशिक और विशिष्ट सामाजिक-पारिस्थितिक संदर्भों में निहित होती हैं। यह ज्ञान वैज्ञानिक विशेषज्ञता से कमतर नहीं, बल्कि पर्यावरण के साथ दीर्घकालिक निकटता और अनुभव का परिणाम है। यह रूपरेखा अनुकूलन को एक साथ राजनीतिक और व्यावहारिक प्रक्रिया के रूप में देखने की अनुमति देती है राजनीतिक इस अर्थ में कि यह प्रभुत्वशाली ज्ञान-प्रणालियों को चुनौती देता है, और व्यावहारिक इस अर्थ में कि यह घरेलू और कृषि जीवन की दैनिक गतिविधियों में अभिव्यक्त होता है।

कार्यप्रणाली

यह अध्ययन मानवशास्त्रीय तथा नारीवादी पारिस्थितिक विश्लेषण पर आधारित एक गुणात्मक और व्याख्यात्मक शोध रूपरेखा अपनाता है। प्राथमिक क्षेत्रीय कार्य पर निर्भर होने के बजाय, यह पूर्वी भारत में स्वदेशी ज्ञान और जलवायु अनुकूलन पर उपलब्ध शैक्षणिक साहित्य की समालोचनात्मक समीक्षा, राज्य जलवायु कार्ययोजनाओं तथा वन-शासन ढाँचों जैसे नीति दस्तावेजों का विश्लेषण, और झारखंड में स्वदेशी कृषि, जल प्रणालियों तथा वन प्रबंधन से संबंधित द्वितीयक अनुभवजन्य अध्ययनों के परीक्षण पर आधारित है। इन स्रोतों को नारीवादी राजनीतिक पारिस्थितिकी और मानवशास्त्रीय सिद्धांतों के वैचारिक समन्वय के माध्यम से पढ़ा और विश्लेषित किया गया है।

विषयगत (थीमैटिक) विश्लेषण के माध्यम से यह अध्ययन स्वदेशी महिलाओं की पारिस्थितिक प्रथाओं के प्रलेखन में उभरने वाले आवर्ती प्रतिरूपों की पहचान करता है तथा यह आलोचनात्मक रूप से मूल्यांकन करता है कि शासन ढाँचे इन ज्ञान प्रणालियों के साथ किस प्रकार संवाद करते हैं या उन्हें किस प्रकार उपेक्षित करते हैं। यह व्याख्यात्मक दृष्टिकोण बिना नए प्राथमिक आँकड़ों के संकलन के, लैंगिक जलवायु अनुकूलन का सैद्धांतिक रूप से सुदृढ़ और गहन विश्लेषण प्रस्तुत करने में सक्षम बनाता है।

स्वदेशी लोकज्ञान के माध्यम से जलवायु अनुकूलन: एक मानवशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य

झारखंड में स्वदेशी लोकज्ञान केवल जलवायु परिवर्तन से निपटने की उपयोगी रणनीतियों का संग्रह मात्र नहीं है; यह पर्यावरण की व्याख्या की एक ऐसी प्रणाली है जो संस्कृति में गहराई से अंतर्निहित है और भूमि, वनों तथा मौसमी चक्रों के साथ दीर्घकालिक अंतःक्रिया से निर्मित हुई है। मानवशास्त्रीय दृष्टि से यह ज्ञान "स्थितिजन्य" और अनुभवजन्य पारिस्थितिक समझ का प्रतिनिधित्व करता है ऐसी सीख जो अवलोकन, अनुष्ठान, शरीरगत श्रम और पीढ़ीगत हस्तांतरण के माध्यम से विकसित होती है। इस परिप्रेक्ष्य में जलवायु अनुकूलन कोई पृथक नीतिगत हस्तक्षेप नहीं, बल्कि दैनिक जीवन में अंतर्निहित एक निरंतर सामाजिक प्रक्रिया है। कृषि, खाद्य प्रबंधन, जल-संग्रह और देखभाल से जुड़ी भूमिकाओं के कारण महिलाएँ इस पारिस्थितिक ज्ञान के सृजन और प्रसार में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं।

स्वदेशी महिलाएँ कृषि निर्णयों के लिए पर्यावरणीय संकेतों जैसे पशु व्यवहार, पुष्पन चक्र, वनस्पति पैटर्न और मिट्टी की नमी की व्याख्या

करती हैं। साल वृक्ष का समय से पहले फूलना, पक्षियों के प्रवास में असामान्यता, या कीट गतिविधियों में परिवर्तन वर्षा की अनिश्चितता के संकेत माने जाते हैं। यह पारिस्थितिक सेमियोटिक्स का उदाहरण है, जहाँ परिदृश्य केवल निष्क्रिय पृष्ठभूमि नहीं बल्कि जलवायु परिवर्तनों के संकेत देने वाले संप्रेषणीय संदर्भ बन जाते हैं। मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से यह एक संबंधपरक विश्वदृष्टि को दर्शाता है, जिसमें मनुष्य और गैर-मानवीय तत्व साझा पारिस्थितिक तंत्र के परस्पर निर्भर घटक हैं। मानकीकृत कृषि कैलेंडरों की तुलना में ये संकेत स्थानीय सूक्ष्म-जलवायु के प्रति अधिक संवेदनशील और लचीले होते हैं। खेतों और वनों के साथ निरंतर सहभागिता विशेषकर महिलाओं की इस पर्यावरणीय साक्षरता को विकसित करती है, जो अनिश्चित जलवायु परिस्थितियों में पूर्वानुमानित अनुकूलन को संभव बनाती है।

स्वदेशी कृषि पद्धतियों में मिश्रित फसल प्रणाली जिसमें बाजरा, दालें, तिलहन और सब्जियाँ सम्मिलित होती हैं जोखिम वितरण की एक रणनीति को दर्शाती है। मानवशास्त्रीय अध्ययनों के अनुसार जैव-विविधता पारिस्थितिक सुरक्षा और सांस्कृतिक निरंतरता दोनों का कार्य करती है। बाजरा जैसे पारंपरिक अनाज पोषक तत्वों से भरपूर, सूखा सहिष्णु और कम बाहरी संसाधनों पर निर्भर होते हैं, जिन्हें महिलाएँ पीढ़ियों से संरक्षित करती आई हैं। ये फसल पद्धतियाँ अल्पकालिक उत्पादन के बजाय दीर्घकालिक सहनशीलता को प्राथमिकता देती हैं और एकल-फसल (मोनोकल्चर) आधारित आधुनिक कृषि प्रतिमानों को चुनौती देती हैं। महिलाओं के फसल चयन निर्णय वर्षा अपेक्षाओं, घरेलू उपभोग, अनुष्ठानिक कैलेंडर और स्थानीय खाद्य परंपराओं से प्रभावित होते हैं। इस प्रकार कृषि जैव-विविधता पारिस्थितिक और सांस्कृतिक दोनों आयामों में कार्य करती है। बीज संरक्षण की प्रथाएँ पारिस्थितिक ज्ञान की कालिक परतों को उजागर करती हैं। महिलाएँ घरेलू और सामुदायिक स्तर पर बीज बैंक संचालित करती हैं तथा सूखा-सहिष्णुता, कीट-प्रतिरोध, स्वाद और पूर्व जलवायु संकटों में प्रदर्शन के आधार पर बीजों का चयन करती हैं। लोकगीत, मौखिक परंपराएँ और मौसमी उत्सव अतीत के सूखों और बाढ़ों की स्मृतियों को संरक्षित करते हैं, जो सामुदायिक स्मृति को अनुकूलन रणनीति में रूपांतरित करते हैं। बीज विनिमय नेटवर्क सामाजिक पारस्परिकता और पारिवारिक संबंधों को सुदृढ़ करते हैं, जबकि विविध बीज संरक्षण आनुवंशिक विविधता को बनाए रखता है, जिससे बदलती जलवायु परिस्थितियों के प्रति लचीलापन बढ़ता है।

जल-संकट झारखंड की प्रमुख जलवायु-संबंधी चुनौतियों में से एक है। जल-संग्रह की दैनिक जिम्मेदारियों के कारण महिलाएँ मौसमी धाराओं, भूजल पुनर्भरण क्षेत्रों और पारंपरिक कुओं से भली-भाँति परिचित होती हैं। यह स्थानीय जल-ज्ञान अक्सर बड़े पैमाने की अवसंरचनात्मक योजनाओं से भिन्न होता है। सामुदायिक जल प्रबंधन, छोटे स्तर की वर्षा जल संचयन और तालाब पुनर्स्थापन जैसी गतिविधियाँ अवलोकन-आधारित विकेंद्रीकृत अनुकूलन को दर्शाती हैं। मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से ये प्रथाएँ साझा संसाधनों की नैतिक अर्थव्यवस्था को रेखांकित करती हैं, जहाँ जल का प्रबंधन केवल बाज़ार या नौकरशाही तर्कों से नहीं, बल्कि सामूहिक सहयोग और परंपरागत मानदंडों से संचालित होता है।

जलवायु परिवर्तन स्वास्थ्य पैटर्न को भी प्रभावित करता है, जिससे जलजनित रोगों और ऊष्मा तनाव में वृद्धि होती है। नीम, तुलसी, गिलोय और वन-जड़ों का उपयोग करने वाली महिलाओं की जातीय-

वनस्पति (एथ्नोबॉटैनिकल) ज्ञान प्रणाली सीमित स्वास्थ्य अवसंरचना वाले क्षेत्रों में सुलभ उपचार प्रदान करती है। उपचार पद्धतियाँ अनुष्ठानों और देखभाल नेटवर्क में अंतर्निहित होती हैं, जिससे ज्ञान का पीढ़ीगत हस्तांतरण सुनिश्चित होता है। यह चिकित्सीय पारिस्थितिकी दर्शाती है कि अनुकूलन केवल कृषि तक सीमित नहीं, बल्कि शारीरिक और सामुदायिक कल्याण से भी जुड़ा है।

समग्र रूप से, ये आयाम यह स्पष्ट करते हैं कि स्वदेशी लोकज्ञान जलवायु अनुकूलन की एक गतिशील, संबंधपरक और सांस्कृतिक रूप से अंतर्निहित प्रणाली है। महिलाएँ केवल श्रमकर्ता नहीं, बल्कि ज्ञान-सत्ता की धारक के रूप में उभरती हैं, जिनका स्थितिजन्य ज्ञान सामाजिक सहनशीलता और पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखता है।

शासन और महिलाओं के ज्ञान का हाशियाकरण

महिलाओं की गहन पारिस्थितिक दक्षता के बावजूद, औपचारिक शासन संरचनाओं में उनके ज्ञान का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। जलागम (वाटरशेड) विकास कार्यक्रम प्रायः बाहरी अभियांत्रिकी मॉडलों को प्राथमिकता देते हैं और मौसमी जल-स्रोतों, भूजल पुनर्भरण क्षेत्रों तथा स्थानीय जल-प्रवाह प्रणालियों के बारे में महिलाओं के अनुभवजन्य ज्ञान की उपेक्षा करते हैं। इसी प्रकार, संयुक्त वन प्रबंधन ढाँचों में महिलाओं की औपचारिक भागीदारी तो सुनिश्चित की जाती है, किंतु वास्तविक निर्णय-निर्माण की शक्ति सीमित रहती है। यह स्थिति "सहभागी बहिष्करण" का उदाहरण है, जहाँ महिलाओं की उपस्थिति तो होती है, परंतु ज्ञान-सत्ता का अभाव बना रहता है। वनरोपण योजनाओं में प्रायः व्यावसायिक या तीव्र-विकासशील प्रजातियों को प्राथमिकता दी जाती है, जबकि महिलाएँ ऐसे जैव-विविध वनों को महत्व देती हैं जो खाद्य, औषधीय और आजीविका संसाधन प्रदान करते हैं। इस प्रकार, शासन प्रणालियाँ स्थितिजन्य और अनुभवजन्य ज्ञान की अपेक्षा तकनीकी विशेषज्ञता को अधिक महत्व देती हैं। जलवायु अनुकूलन के संदर्भ में लैंगिक पारिस्थितिक ज्ञान की उपेक्षा न केवल समानता को कमजोर करती है, बल्कि नीतिगत हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता को भी कम करती है।

स्थितिजन्य ज्ञान और जलवायु सहनशीलता

अध्ययन के निष्कर्ष तीन प्रमुख आयामों को उजागर करते हैं। पहला, झारखंड में अनुकूलन सांस्कृतिक जीवन और दैनिक प्रथाओं में गहराई से अंतर्निहित है। स्वदेशी लोकज्ञान एक स्थिर प्रणाली नहीं, बल्कि निरंतर विकसित होने वाली प्रक्रिया है, जो अवलोकन, प्रयोग और अनुभव के माध्यम से अद्यतन होती रहती है। दूसरा, महिलाओं का पारिस्थितिक श्रम उन्हें महत्वपूर्ण ज्ञान-धारक के रूप में स्थापित करता है। बीज, जल, मिट्टी और वनों के साथ उनके दैनिक संबंध शरीरगत पर्यावरणीय दक्षता का निर्माण करते हैं, जो अनिश्चित जलवायु परिस्थितियों में लचीले निर्णय लेने में सहायक होती है। तीसरा, शासन ढाँचे प्रायः ऐसी ज्ञान-सोपानिक संरचनाओं को पुनरुत्पादित करते हैं जो अनुभवजन्य और स्थितिजन्य ज्ञान को कमतर आँकती हैं। इस अंतर को पाटने के लिए ज्ञान के सह-उत्पादन की आवश्यकता है, जहाँ वैज्ञानिक और स्वदेशी ज्ञान प्रणालियाँ परस्पर संवाद में हों। मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से अनुकूलन शक्ति-संबंधों, सांस्कृतिक स्मृति और सामाजिक नेटवर्क से गहराई से जुड़ा है।

नारीवादी पारिस्थितिकी यह रेखांकित करती है कि लैंगिक न्याय जलवायु सहनशीलता का परिशिष्ट नहीं, बल्कि उसका मूल आधार है।

पर्यावरणीय ज्ञान प्रणालियों का लोकतंत्रीकरण

जलवायु शासन में स्वदेशी महिलाओं के पारिस्थितिक ज्ञान को एकीकृत करने के लिए केवल प्रतीकात्मक भागीदारी पर्याप्त नहीं है; इसके लिए निर्णय-निर्माण संस्थाओं में संरचनात्मक परिवर्तन आवश्यक है। सर्वप्रथम, पंचायतों, वन समितियों और जलागम प्रबंधन समूहों जैसे ग्राम-स्तरीय शासन निकायों में महिलाओं को पारिस्थितिक विशेषज्ञ के रूप में औपचारिक मान्यता दी जानी चाहिए। बीज प्रणालियों, मिट्टी की उर्वरता, मौसमी संकेतकों और जल-स्रोतों के संबंध में उनके ज्ञान का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण कर उसे स्थानीय विकास योजनाओं में सम्मिलित किया जाना चाहिए। सामुदायिक बीज बैंकों और कृषि जैव-विविधता पहलों को संस्थागत समर्थन देना भी अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि ये प्रथाएँ जलवायु-सहनशील फसलों को संरक्षित करती हैं और दीर्घकालिक अनुकूलन के लिए आवश्यक आनुवंशिक विविधता को बनाए रखती हैं। लैंगिक-संवेदनशील सहभागी मानचित्रण के माध्यम से भूजल पुनर्भरण क्षेत्रों, वन संसाधनों और मौसमी पारिस्थितिक संकेतों के बारे में महिलाओं के ज्ञान को योजना निर्माण में समाविष्ट किया जा सकता है। यह प्रक्रिया केवल आंकड़े एकत्र करने तक सीमित न होकर महिलाओं को अनुकूलन रणनीतियों के निर्माण में सक्रिय भूमिका प्रदान करे। स्थानीय पारिस्थितिक संकेतकों को वर्षा पूर्वानुमान और कृषि विस्तार सेवाओं जैसी जलवायु परामर्श प्रणालियों में सम्मिलित करने से वैज्ञानिक और स्वदेशी ज्ञान के बीच सेतु स्थापित हो सकता है, जिससे अनुकूलन उपाय अधिक संदर्भ-विशिष्ट और प्रभावी बनेंगे।

स्थानीय स्तर के सुधारों के अतिरिक्त, व्यापक शासन-पुनर्गठन भी आवश्यक है ताकि ज्ञान-संबंधी असमानताओं को दूर किया जा सके। वैज्ञानिक अनुसंधान और स्वदेशी प्रमाणों को संयोजित करने वाले संकर (हाइब्रिड) शासन मॉडल ज्ञान के सह-उत्पादन को बढ़ावा दे सकते हैं, जहाँ जलवायु वैज्ञानिक, विस्तार कार्यकर्ता और स्वदेशी महिलाएँ मिलकर पर्यावरणीय परिवर्तन की व्याख्या करें। यह दृष्टिकोण वैज्ञानिक डेटा और अनुभवजन्य ज्ञान को परस्पर पूरक मानता है, न कि पदानुक्रमित। साथ ही, वन और जल समितियों में महिलाओं की वास्तविक न कि केवल प्रतीकात्मक भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कानूनी सुधार आवश्यक हैं, जिनमें आरक्षित निर्णयकारी पद और अनिवार्य परामर्श प्रक्रियाएँ शामिल हों। ये उपाय सतत विकास लक्ष्यों विशेषकर लक्ष्य 5 (लैंगिक समानता), 13 (जलवायु कार्रवाई) और 15 (स्थलीय पारिस्थितिकी) के अनुरूप हैं, क्योंकि वे लैंगिक न्याय, पारिस्थितिक स्थिरता और जैव-विविधता संरक्षण को एक साथ प्रोत्साहित करते हैं। अंततः, जब जलवायु शासन स्वदेशी महिलाओं के ज्ञान को केंद्र में रखता है, तब अनुकूलन केवल तकनीकी हस्तक्षेप न रहकर सामाजिक रूप से न्यायसंगत, सांस्कृतिक रूप से आधारभूत और पर्यावरणीय रूप से टिकाऊ विकास की दिशा में रूपांतरित हो सकता है।

निष्कर्ष

झारखंड में जलवायु परिवर्तन को केवल एक पर्यावरणीय संकट के रूप में नहीं, बल्कि एक गहराई से लैंगिक और ऐतिहासिक रूप से

निहित प्रक्रिया के रूप में समझा जाना चाहिए, जो दीर्घकालिक सामाजिक अन्याय, पारिस्थितिक क्षरण और निष्कर्षण-आधारित विकास से प्रभावित है। निर्वाह कृषि, वन प्रबंधन, देखभाल कार्य और सामुदायिक जीवन के संगम पर स्थित स्वदेशी महिलाएँ जलवायु परिवर्तनशीलता से सर्वाधिक प्रभावित होती हैं। तथापि, वे निष्क्रिय पीड़ित नहीं हैं। जल प्रबंधन, मिश्रित फसल प्रणाली, बीज संरक्षण और औषधीय ज्ञान के माध्यम से वे घरेलू और सामुदायिक स्तर पर सहनशीलता को सक्रिय रूप से बनाए रखती हैं। उनकी पारिस्थितिक प्रथाएँ जो स्मृति, अनुष्ठान और पीढ़ीगत हस्तांतरण में अंतर्निहित हैं अनुकूलन के ऐसे जीवंत ज्ञान-भंडार का निर्माण करती हैं, जो पर्यावरण के साथ दीर्घकालिक सहभागिता से विकसित हुआ है।

अतः सतत और सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण जलवायु अनुकूलन के लिए ज्ञान-संबंधी (एपिस्टेमिक) परिवर्तन अनिवार्य है। शासन ढाँचों को तकनीकी-केंद्रित दृष्टिकोण से आगे बढ़कर स्वदेशी महिलाओं को वैध ज्ञान-धारक और निर्णयकर्ता के रूप में मान्यता देनी होगी। मानवशास्त्रीय दृष्टि से समृद्ध और लैंगिक-संवेदनशील नीतियाँ स्थानीय तथा वैज्ञानिक ज्ञान प्रणालियों के बीच सेतु का कार्य कर सकती हैं, जिससे जलवायु प्रतिक्रियाएँ सांस्कृतिक रूप से आधारभूत, पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील और सामाजिक रूप से न्यायसंगत बन सकें।

सन्दर्भ सूची

1. एडगर डब्ल्यू.एन. सामाजिक पूंजी, सामूहिक कार्रवाई और जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन. आर्थिक भूगोल. 2003;79(4):387-404.
2. अग्रवाल बी. पर्यावरणीय कार्रवाई, लैंगिक समानता और महिलाओं की भागीदारी. विकास और परिवर्तन. 1997;28(1):1-44.
3. अग्रवाल बी. सहभागितापूर्ण बहिष्करण, सामुदायिक वानिकी और लैंगिकता: दक्षिण एशिया का विश्लेषण एवं एक वैचारिक रूपरेखा. विश्व विकास. 2001;29(10):1623-1648.
4. अग्रवाल बी. जेंडर और हरित शासन: सामुदायिक वानिकी में महिलाओं की उपस्थिति की राजनीतिक अर्थव्यवस्था. ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2010.
5. बनर्जी आर, महापात्रा एस, साहू के.सी. भारत में जलवायु परिवर्तन और स्वदेशी समुदाय: प्रभाव, अनुकूलन एवं नीतिगत प्रश्न. भारतीय दलित अध्ययन संस्थान; 2014.
6. बाविस्कर ए. नदी के गर्भ में: नर्मदा घाटी में विकास और जनजातीय संघर्ष. ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 2004.
7. बर्कस एफ. पवित्र पारिस्थितिकी. चौथा संस्करण. लंदन: रूटलेज; 2018.
8. बोस पीएस. वन शासन, विकेंद्रीकरण और महिलाओं का हाशियाकरण: पूर्वी भारत का एक अध्ययन. जेंडर, प्लेस एंड कल्चर. 2011;18(4):493-513.
9. क्रेंशॉ के. हाशियों का मानचित्रण: अंतर्संबंधता, पहचान की राजनीति और अश्वेत महिलाओं के विरुद्ध हिंसा. स्टैनफोर्ड लॉ रिव्यू. 1991;43(6):1241-1299.

10. डे एस, सरकार आर. जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन के रूप में स्वदेशी कृषि पद्धतियाँ: पूर्वी भारत के जनजातीय क्षेत्रों से साक्ष्य. भारतीय पारंपरिक ज्ञान पत्रिका. 2011;10(4):682-690.
11. गाडगिल एम, गुहा आर. खंडित भूमि: भारत का पारिस्थितिक इतिहास. ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस; 1992.
12. गोल्डमैन एमजे, टर्नर एमडी, डेली एम. भूमि शासन में सुधार हेतु महिलाओं का ज्ञान, अधिकार और संस्थाएँ. विश्व विकास. 2016;83:255-272.
13. झारखंड सरकार. झारखंड राज्य जलवायु परिवर्तन कार्ययोजना (एसएपीसीसी). वन, पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन विभाग; 2014.
14. हरावे डी. स्थित ज्ञान: नारीवाद में विज्ञान का प्रश्न और आंशिक दृष्टिकोण का विशेषाधिकार. फेमिनिस्ट स्टडीज. 1988;14(3):575-599.
15. जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी पैनल (आईपीसीसी). जलवायु परिवर्तन 2022: प्रभाव, अनुकूलन और संवेदनशीलता. कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस; 2022.
16. ज्विट एस. झारखंड के संघर्षों की राजनीतिक पारिस्थितिकी: खनिज-समृद्ध क्षेत्रों में राज्य, पूँजी और प्रतिरोध. विकास और परिवर्तन. 2008;39(4):567-588.
17. केलकर जी, नाथन डी. जेंडर और जनजाति: झारखंड में महिलाएँ, भूमि और वन. सेज पब्लिकेशन्स; 2020.
18. कोठारी ए, सल्लेह ए, एस्कोबार ए, डेमरिया एफ, अकोस्ता ए, संपादक. प्युरिक्स: उत्तर-विकास शब्दकोश. नई दिल्ली: तुलिका बुक्स; 2019.
19. कुमार एस, मिश्रा ए, प्रधान पी. पूर्वी भारत में पारंपरिक जल-संचयन प्रणालियाँ और जलवायु अनुकूलन. ग्रामीण विकास पत्रिका. 2019;38(2):205-223.
20. लीच एम. वर्षावन संबंध: सिएरा लियोन के मेंडे समुदाय में जेंडर और संसाधनों का उपयोग. वाशिंगटन (डीसी): स्मिथसोनियन इंस्टीट्यूशन प्रेस; 1994.
21. मियर्स आर, नॉर्टन ए, संपादक. जलवायु परिवर्तन के सामाजिक आयाम: समानता और संवेदनशीलता. वाशिंगटन (डीसी): विश्व बैंक; 2010.
22. पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (एमओईएफसीसी), भारत सरकार. संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन रूपरेखा अभिसमय को भारत की तीसरी द्विवार्षिक अद्यतन रिपोर्ट. नई दिल्ली: भारत सरकार; 2021.
23. मीज़ एम, शिवा वी. पारिस्थितिक नारीवाद. लंदन: जेड बुक्स; 1993.
24. नाइटिंगेल एजे. जेंडर की प्रकृति: कार्य, जेंडर और पर्यावरण. एनवायरनमेंट एंड प्लानिंग डी: सोसाइटी एंड स्पेस. 2006;24(2):165-185.
25. नाइटिंगेल एजे. अनुकूलनशील शोध और स्थित ज्ञान? एरिया. 2016;48(1):41-47.
26. ओस्ट्रोम ई. साझा संसाधनों का शासन: सामूहिक कार्रवाई की संस्थाओं का विकास. कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस; 1990.
27. पेलिंग एम. जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन: सहनशीलता से रूपांतरण तक. लंदन: रूटलेज; 2011.
28. योजना आयोग, भारत सरकार. भारत के जनजातीय समुदायों की सामाजिक-आर्थिक, स्वास्थ्य एवं शैक्षिक स्थिति पर उच्चस्तरीय समिति की रिपोर्ट. नई दिल्ली: भारत सरकार; 2013.
29. रिबोट जेसी. संवेदनशीलता आकाश से नहीं गिरती: बहुस्तरीय, गरीब-समर्थक जलवायु नीति की ओर. ग्लोबल एनवायरनमेंटल चेंज. 2010;20(4):528-530.
30. रोशेलो डी, थॉमस-स्लेयर बी, वांगारी ई, संपादक. नारीवादी राजनीतिक पारिस्थितिकी: वैश्विक मुद्दे और स्थानीय अनुभव. लंदन: रूटलेज; 1996.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution-Non-Commercial-No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) license. This license permits sharing and redistribution of the article in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted under this license.

About the Author



आरती कुमारी झारखंड, भारत के राँची विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में शोधार्थी हैं। उनका शैक्षणिक एवं शोध कार्य इतिहास के विभिन्न पहलुओं के अध्ययन पर केंद्रित है। वे ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक परिवर्तनों तथा सांस्कृतिक विरासत के विश्लेषण में रुचि रखती हैं और इतिहास संबंधी ज्ञान के अकादमिक विकास हेतु प्रयासरत हैं।